१ ओअंकार (੧ੴ) सति गुर प्रसादि

आर्य समाज और गुरमति

तुल्नातमिक धर्म अध्ययन

>< >< >< >< >< >< >< >< >< >< ><

मूल रूप में

सिक्ख मिशनरी कॉलेज (रजि.)
लुधियाना द्वारा प्रकाशित पुस्तक

क्रांतिकारी जगत् गुरू नानक देव चैरिटेबल ट्रस्ट, चण्डीगढ़

लॉन्च करता : जसबीर सिंघ
Mob. : 099881-60484, 62390-45985

Type Setting : Radheshyam Choudhary
Mob. : 098149- 66882

Download Free

आर्य समाज और गुरमति

आर्य समाज : इसके संस्थापक **स्वामी दया नंद जी काठियावाड़ के रहने वाले थे।**

स्वामी जी का जन्म गांव टंकारा, रियासत मोरवी (काठियावाड़) में अंबा शंकर (ब्राहमण) के घर में 1824 को हुआ था। इन का पहला नाम मूल शंकर था। 8 वर्ष की आयु में मूल शंकर को शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेज दिया गया। एक एक बार शिवरात्रि वाले दिन पिता अंबा शंकर, मूल शंकर को शिव जी की पूजा करने को मंदिर में ही छोड़ कर स्वयं कहीं चले गए। पीछे से बालक मूल शंकर ने देखा कि चूहे मूर्ति के आगे पीछे, ऊपर नीचे भाग दौड़ कर रहे थे पर मूर्ति उन को रोक नहीं रही थी। मिठाई भी चूहे ही खाए जा रहे थे। मूर्ति नहीं खा रही थी। उसने सोचा कि जिस मूर्ति का भोजन चूहे खा रहे हैं, भला वह मूर्ति किसी को क्या फल दे सकती है? इस विचार से मूल शंकर के मन में से मूर्ति के सम्मान या मूर्ति पूजा का विचार मूल से ही हट गया।

इस छोटी सी घटना ने मूल शंकर के मन पर बहुत गहरा प्रभाव डाला और उसने विद्या ग्रहण करने और सच्चे की प्राप्ति के लिए दृढ़ निश्चय कर लिया। अंबा शंकर ने मूल शंकर की उपरामता को अनुभव कर लिया। पर वह किसी तरह से भी उसको विवाह आदि से बंधन में न डाल कसे। वे घर से भाग गए। अंबा शंकर उस को ढूंढ कर घर ले आये। पर वह फिर दांव लगा कर भाग गया और पुन: हाथ न आया। दूसरी बार भागते समय उसकी आयु 16 वर्ष की थी।

पहले तो वह रमता साधुओं की संगत में रमते ही रहे। बाद में उन्होंने संन्यासी परमानंद से गुरदीक्षा ली और संन्यासी बन गए। अब उसका नाम दया नंद सरस्वती रखा गया।

इसके पश्चात वे बनारस, जवालापुर, बदरिका आदि आश्रमों पर गए। 1860 में उनका मेल स्वामी वृजा नंद के संग हुआ जो संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान व करतारपुर जिला जलंधर के निवासी थे। स्वामी दया नंद जी ने इन की संगत में रह कर चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त किया और विद्या संपूर्ण होने के उपरांत आज्ञा लेते समय पूछा कि उन को अब क्या करना चाहिए। स्वामी वृजानंद जी ने

कहा ‘‘ सन्यासी का काम प्रचार व सुधार करना होता है, इसलिए वह भी वेदों का प्रचार व संसार का सुधार करने व पढ़ी हुई विद्या को फैलाने’’ हेतु आज्ञा ले कर स्वामी जी ने प्रचार आरंभ कर दिया।

वह समय नई रोशनी का था। अंग्रेजी राज्य तथा पश्चिमी सभ्यता के आने के कारण लोगों मे विशेष परिवर्तन आ रहा था। इसाई पादरी हिंदुओं आ चुकी सामाजिक गिरावट को दृष्टि में रख कर, हिंदुओं के पौराणिक मत का खंडन कर रहे थे ताकि हिंदु अपने मत से घृणा करने लग जाएं और इसाई बन जाएं। इसलाम व कुछ और मत भी हिंदु मत पर नित्य नवीन टीका टिप्पणी कर रहे थे।

ऐसे समय पर स्वामी दया नंद ने वैदिक धर्म का प्रचार आरंभ किया और हिंदुओं को उपदेश दिया कि व समाज में आ चुकी कुरीतियों को दूर करें व उस धर्म पर चलें जिसका वर्णन वेदों में है और पुरातन महात्रृषियों ने प्रचारित किया है। स्वामी जी ने बहुत हास्यपूर्ण व व्यंगयात्मक ढंग से इसाई, पौराणिक, इसलाम आदि मतों पर टीका टिप्पणी की। 1860 से 1900 तक का समय मजहबी गोष्टिठयों व बहस का काल कहा जा सकता है। इन जलसों में खंडन मंडल कर के स्वामी दया नंद जी ने खूब प्रसिद्धि प्राप्त की।

स्वामी दयानंद जी मूर्ति पूजा के सख्त विरोधी थे। यहां तक कि वे अपनी फोटो खिंचवाने के पक्ष में भी नहीं थे। कहते हैं कि एक बार किसी सज्जन ने उनकी फोटो खींचनी चाही तो उन्होंने इनकार करते हुए कहा, ‘मैं तुझे फोटो नहीं खींचने दूंगा क्योंकि मुझे डर है कि तूं कहीं मेरी फोटो की पूजा ही न करनी शुरू कर दें।’’

वे पुराणों का भी सख्त विरोध करते थे। रवायत है कि किसी सज्जन ने उनसे पूछा, ‘आप पुराणों का विरोध क्यों करते हैं?’’ तो उन्होंने उत्तर दिया, ‘‘यदि तेरे भोजन में कोई जहर मिला दे तो तूं खा लेगा?’’ उत्तर में उसने कहा, ‘‘जी नहीं’’ । स्वामी जी ने फिर कहा, ‘‘बस यही दशा पुराणों की है। इन में बहुत गड़-बड़ हो रखी है। इसलिए इन पर चलने की आवश्यकता नहीं है।’’

मूर्ति पूजा करने वाले उनकी जान के शत्रु बन चुके थे। एक बार एक आदमी तो उन्हें मारने भी गया पर उनके व्यक्तिगत प्रभाव में आ कर उन्हें मार न सका।

17 नवंबर 1868 को काशी में वहां के राजा जै कृष्ण की अध्यक्षता में एक जलसा हुआ। इस में स्वामी दयानंद जी ने अकेले ही पांच छ: सौ पंडितों के साथ मूर्ति पूजा तथा देव पूजा के सिद्धांतों पर शास्त्रास्त्र किया। मूर्ति पूजा को वेद विरुद्ध बता कर जोरदार खंडन किया। इसके पश्चात वे सारे भारत वर्ष में अपने प्रचारक दौरों पर जाने लगे।

1 मार्च 1875 को उन्होंने बंबई में प्रथम आर्य समाज स्थापित की। इसके पश्चात उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश, जिस में अन्य धर्मो की भांति सिख धर्म के बारे में भी काफी कुछ ऊल जलूल लिखा गया है, व वेदों का भष्य लिखना शुरू किया। 1875 में चांद पुर में एक सर्व धर्म सम्मलेन हुआ जिस में स्वामी जी ने वैदिक धर्म का प्रचार व दूसरे मतों का खंडन मंडन किया और काफी प्रसिद्धि प्राप्त की।

पंजाब में स्वामी जी 1877 में आए। यहां पर कुछेक सज्जनों ने इन के विचारों को अंगीकृत कर लिया। जिन लोगों ने उनके विचारों को पहले पहल स्वीकार किया उन में से गुरु दत्त, लाजपत राय, महात्मा हंस राज, डाक्टर जै सिंघ व भाई गुरमुख सिंघ जी ने नाम वर्णन योग्य हैं। आर्य समाज तो स्थापित हो गया। पर भाई गुरमुख सिंघ व डाक्टर जै सिंघ बहुत समय तक इनके साथ न रह सके। इन के विचार हुआ भिन्न थे। ये सिंघ सभियों से संग आ मिले। सिंघ सभाइयों व समाजियों में मतभेद शुरू हो गए। स्वामी जी ने ज्ञानी दित्त सिंघ जी के साथ बहस की। ज्ञानी जी ने दो तीन वार स्वामी जी के मत का खूब खंडन किया और तकड़ी हार दी।

सहारनपुर में इन का मेल न्यू यार्क कि थियोसाफीकल सोसायटी के कुछ प्रमुख लोगों से हुआ। थोड़ा-बहुत पत्राचार भी चला । फिर 1878 ई में वे सहारनपुर में ही एक दूसरे को मिले। कुछ दिन मिल कर काम करने के पश्चात इनका संबंध-विच्छेद हो गया। दोनों संस्थाएं फिर से अलग-अलग हो गई।

राजा जोधपुर के निमंत्रण पर जोधपुर में चार मास ठहर कर कई विषयों पर प्रकाश डालते रहे। उदयपुर भी वे हो आए थे। राज दरबारों में वेश्याओं के मुजरे भी उन्होंने बंद करवा दिए थे।

मूर्ति पूजा करने वाले उनके विरोधी तो थे ही । अब वे उनके जानी दुश्मन बन कर स्वामी जी को जान से मारने की योजनाएं बनाने लगे। आखिर उन्होंने जगन्नाथ रसोइए को लालच दे कर

स्वामी जी को भोजन में जहर मिला कर खिला दिया। इसका स्वामी जी को जल्द ही पता चल गया। पर उन्होंने रसोइए को फिर भी क्षमा कर दिया। उन्होंने रसोइए को वहां से भाग जाने को कहा। जहर का असर तो हो चुका था। इलाज तो काफी किये गये, पहाड़ पर भी भेजा गया, पर आप अरोग न हो सके। 30 अक्तूबर सन 1883 को दीवाली वाली रात को, दैवी निमंत्रण आने पर, आप अजमेर में ही शरीर त्याग गए।

आर्य समाज के सिद्धांत और नियम :

(1) सभी विद्याओं व विद्याओं द्वारा प्राप्त की जाने वाली जानकारी व पदार्थों का मूल परमात्मा है।

(2) ईश्वर सच्च-दा-नंद, निराकर, सर्व शक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्म, अनंत, निर्विकार, अनुपम, अनादि, सर्व आधार व सृष्टि का कर्ता है। उसी की पूजा व उपासना करनी चाहिए।

(3) वेद, सारी विद्याओं का मूल है। उसका पढ़ना व पढ़ाना प्रत्येक आर्यन का धर्म है।

(4) सत्य के ग्रहण करने और असत्य का त्याग करने के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए।

(5) सभी कार्य धर्म व सत्य के अनुसार करो।

(6) संसार के कल्याण-शरीरिक, सामाजिक व हर प्रकार की उन्नति के लिए संघर्ष करना, प्रत्येक आर्य समाजी का धर्म है।

(7) सब के साथ प्रेम पूर्वक व धर्म के अनुरूप व्यवहार करना चाहिए।

(8) विद्या प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना उचित है।

(9) केवल जातिगत उन्नति के लिए प्रयास करना काफी नहीं है। प्रत्येक मनुष्य को दूसरों के लिए भी प्रयत्न करने चाहिए।

(10) समाज के भले के लिए नियमों के पालने में प्रतीति की आवश्यकता है, परंतु कल्याणकारी नियमों का स्वतंत्रता से भी पालन किया जा सकता है।

स्वामी दया नंद जी ने नीचे लिखे ग्रंथ लिखे :

(1) सत्यार्थ प्रकाश ***(2) ऋग वेद भाष भूमिका***

(3) संस्कार विधि ***(4) गो करणा निधि***

इसके अतिरिक्त नीचे दिए गए सिद्धांतों का भी वर्णन किया गया है :

(1) मूर्ति पूजा का खंडन।

(2) जाति जन्म के अनुसार नहीं, कर्म के अनुसार है।

(3) जात पात व छूत छात बिल्कुल नहीं माननी चाहिए।

(4) विधवा विवाह में व्यवधान नहीं डालना चाहिए।

(5) संतान उत्पत्ति के लिए नियोग (परपुरुष के पास जाना) गुनाह नहीं, बल्कि आवश्यकता है।

(6) श्राद्ध व तीर्थ पूजा अकार्थ हैं।

उपरोक्त सिद्धांत आर्य समाज के मौलिक सिद्धांत हैं।

आर्य समाज का प्रचार सब से अधिक पंजाब में ही हुआ है। सब से पहले डी. ए. वी. कालेज लाहौर में ही बना था। इस का एक विशेष कारण भी है, जो 1901 की जनगणना के सुपरिंटेंडेंट की रिपोर्ट से भली भांति स्पष्ट है:

''आर्य समाज का प्रचार अधिकांश पंजाब में व विशेषकर उत्तरी पश्चिमी जिलों में हुआ। इस का कारण यह है कि यहां पर श्री गुरु नानक देव जी ने मूर्ति पूजा व सामाजिक बुराइयों का खंडन किया था।''

लॉन्च करता : जसबीर सिंघ
Mob. : 099881-60484, 62390-45985

Type Setting : Radheshyam Choudhary
Mob. : 098149- 66882